वृद्धि और विकास के लिए वित्तीय क्षेत्र की नीतियाँ*

- वाई.वी.रेड्डी

मैं गवर्नर बुरहानुद्दीन अब्दुला का कृतज्ञ हूँ कि उन्होंने मुझे वार्षिक अंतरराष्ट्रीय सेमीनार 2007 में आमंत्रित किया। हम बैंक इंडोनेशिया की अत्युत्तम व्यवस्था, गर्मजोशी और आतिथ्य की सराहना करते हैं । विशेष रूप से उप गवर्नर सुश्री मिरांडा गोयलटॉम के प्रति मैं विशेष धन्यवाद ज्ञापन करता हूँ। मैं इस सेमीनार के दौरान चर्चा के लिए सुविचारित रूप से चुने गये विषयों की भी निष्कपट रूप से सराहना करता हूँ । ये विषय हम सबों के लिए समसामयिक रूप से प्रासंगिक हैं ।

वित्तीय क्षेत्र की नीतियों की भूमिका वृद्धि और रोजगार की दिशा में संबंधित देश की समग्र सार्वजनिक नीति के लिए संस्थागत व्यवस्थाओं के साथ स्वाभाविक रूप से महत्वपूण संबंध रखती है । नीति का ढाँचा और संचालन संबंधित देश या समाज के प्रति विशिष्ट होगा और दीर्घावधि में सामान्य रूप से बदलती आर्थिक गतिविधियों और विशेष रूप से वित्तीय क्षेत्र की गतिविधियों की प्रतिक्रिया में परिवर्तित होगा । इसलिए आज मेरी टिप्पणी भारतीय अनुभव तक सीमित होगी और निरंतर चलने वाले आर्थिक सुधारों के संदर्भ में भारतीय रिज़र्व बैंक (आरबीआई) की वित्तीय क्षेत्र नीतियों की बदलती भूमिका को स्पष्ट करेगी।

मौद्रिक नीति

भारत में मौद्रिक नीति के उद्देश्य का प्रतिपादन स्पष्ट रूप से कीमत स्थिरता के साथ-साथ उत्पादक प्रयोजनों के लिए पर्याप्त ऋण की व्यवस्था करना रहा है । इस प्रकार दो उद्देश्यों में से एक उद्देश्य के रूप में वृद्धि हमारे अधिदेश का भाग है, लेकिन नीतिगत परिचालनों पर आपेक्षिक जोर परिस्थितियों पर निर्भर करता है और समय-समय पर उसे स्पष्ट किया जाता है । अक्सर यह कहा जाता है कि भारत में सर्वोत्तम निर्धनता विरोधी कार्यक्रम कीमत स्थिरता है, क्योंकि कार्य-बल का बहुत बड़ा हिस्सा असंगठित क्षेत्र में है, जिसे मुद्रास्फीति से

* डॉ.वाई.वी.रेड्डी, गवर्नर, भारतीय रिज़र्व बैंक, द्वारा बाली, इंडोनेशिया में 8 नवंबर 2007 को दिया गया भाषण।

बचाव का कोई साधन प्राप्त नहीं है । हाल के वर्षों में सुदृढ़ वृद्धि पर्यावरण के साथ-साथ तेल की कीमतों और खाद्यान्न मदों की कीमतों में वृद्धि होने से मूल्य स्थिरता पर अधिक जोर दिये जाने की आवश्यकता हुई है, खासकर मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं के संदर्भ में।

जैसाकि आरबीआई के हाल के मौद्रिक नीति वक्तव्य में स्पष्ट किया गया है, निर्धन लोग उच्च वृद्धि का लाभ एक समयांतर से उठा पाते हैं, जबकि कीमतों में वृद्धि का प्रभाव उन पर तुरंत होता है । अल्पावधि में उच्च वृद्धि और कीमत वृद्धि के प्रभाव निर्धनेतर और निर्धन लोगों के बीच विषम होते हैं, जिसमें यह जरूरी होता है कि सामाजिक मेल-मिलाप बनाये रखने और सुधार प्रक्रिया के लिए लोकप्रिय जनादेश प्राप्त करने के लिए इस संधिकाल में मूल्य स्थिरता पर काफी अधिक जोर दिया जाये । अपने स्वागत भाषण में गवर्नर अब्दुल्ला ने वैश्वीकरण के संदर्भ में असमानताओं के मुद्दे के बारे में और केंद्रीय बैंकों की स्थायित्व के प्रति प्रतिबद्धता और कारोबार के लिए अनुकूल वातावरण के बारे में उल्लेख किया ।

इसी तरह, वित्तीय स्थायित्व के संबंध में भी, हम यह नोट करते हैं कि वित्तीय बाजारों में अधिकांश सक्रिय प्रतिभागी निर्धनेतर लोग होते हैं । वित्तीय क्षेत्र के संदर्भ में जहाँ सकारात्मक और कभी-कभी नकारात्मक दोनों प्रकार के दृश्य दिखाई पड़ते हैं - एक हद तक हमारी नीतियों में स्थायित्व को इस दृष्टि से महत्व दिया गया है कि वित्तीय क्षेत्र की गतिविधियों के चलते संपदा क्षेत्र में हो सकने वाली जोखिमों को सहन करने की क्षमता निर्धनों में सीमित होती है । भारत में सामाजिक सुरक्षा तंत्र और जन-सुरक्षा के तत्वों का अभाव भी प्रासंगिक हैं । इस प्रकार, भारत में वित्तीय क्षेत्र के उदारीकरण की डिजाइन और गति में स्थायित्व के लिए उचित महत्व को ध्यान में रखा जाता है।

वित्तीय बाजारों, संस्थाओं, प्रौद्योगिकी आदि का विनियमन और विकास

वित्तीय प्रणाली की कार्यकुशलता और स्थायित्व में वृद्धि करने की दृष्टि से और इस प्रकार वृद्धि और रोजगार में योगदान करने की दृष्टि से वित्तीय बाजारों को विस्तारित करने, सुदृढ़ बनाने और एकीकृत करने के लिए अनेक कदम उठाये गये हैं, हालाँकि यह 'काम चालू है' की अवस्था में है । इसके साथ ही बैंकिंग क्षेत्र, जमा स्वीकार करने वाली गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों और जमा स्वीकार नहीं करने वाली गैर-वित्तीय कंपनियों के संबंध में नयी प्रक्रियाओं और संस्थागत व्यवस्थाओं को यथास्थान रखा गया है । सब मिलाकर, ये उपक्रमण, खासकर पर्यवेक्षकीय प्रणालियाँ वैश्विक सर्वोत्तम व्यवहार के संरेखण में हैं, लेकिन वित्तीय संस्थाओं के सार्वजनिक स्वामित्व विनियम, वित्तीय नवोन्मेष, आदि, के बीच गत्यात्मक समझौताकारी तालमेल है । इसी प्रकार वित्तीय क्षेत्र में प्रौद्योगिकी के उपयोग और व्यष्टि संरचना को बढ़ाने के लिए अनेक कदम उठाये गये हैं । वित्तीय क्षेत्र की नीतियों का निरंतर विकास हो रहा है, आवश्यक रूप से सक्रिय ढंग से । इनमें से प्रत्येक क्षेत्र के लिए मध्यावधि ढाँचा या विजन-प्रलेख वर्ष 2004 से तैयार किये गये हैं और इन्हें बाजार प्रतिभागियों और उद्योग संघों (जिनमें से कुछ की स्थापना आरबीआई के प्रोत्साहन पर की गयी है) के साथ निरंतर परामर्श करते हुए कार्यान्वित किया जा रहा है । इससे संबंधित सोच और प्रगति को आरबीआई की वार्षिक नीतियों और मध्यावधि समीक्षाओं के माध्यम से स्पष्ट किया जाता है ।

ऋण की लागत

अतीत में नियंत्रित ब्याज दरों की एक व्यापक प्रणाली के भाग के रूप में बैंक और वित्तीय संस्थाएँ कुछ क्षेत्रों को और उधारकर्ताओं की कुछ कोटियों को भी रियायती शर्तों पर ऋण दिया करते थे, जिसके चलते महत्वपूर्ण

प्रतिसहायता की व्यवस्था होती थी । बैंकों द्वारा ऋण आबंटन भी ऐसे अनेक क्षेत्रों/उधारकर्ताओं के प्रति विविध निर्धारणों के माध्यम से निदेशित होता था । आरबीआई भी दीर्घकालीन प्रवर्तन (एलटीओ) निधियों में नियमित रूप से अंशदान करता आ रहा था, ताकि औद्योगिक या कृषि विकास के लिए सामान्यतः रियायती शर्तों पर पुनर्वित्त प्रदान किया जा सके । केंद्र सरकार के बजट घाटों के स्वयमेव मुद्रीकरण के साथ मिलकर ऐसे अंशदान प्राथमिक या आरक्षित मुद्रा में भी महत्वपूर्ण वृद्धि के कारक हुआ करते थे । इस प्रथा को धीरे-धीरे हाल के वर्षों में आर्थिक सुधार के भाग के रूप में इस आधार पर चरणबद्ध रूप से समाप्त किया गया है कि एक उदारीकृत वातावरण में पुनर्वित्त संस्थाओं को बाजार से संसाधन जुटाने के अवसरों को बढ़ाना चाहिए । तथापि, यदि उनके किसी कार्यकलाप का परिणाम प्रतिसहायता में दृष्टिगोचर होता है, तो हमारा विश्वास है कि भारत सरकार को सहायता प्रदान करने के लिए न्यायोचित रूप से प्राथमिक दायित्व वहन करना चाहिए । अतः आरबीआई सहायता, यदि हो, ऐसे योग्य कारणों के लिए भारत सरकार के माध्यम से लाभों का अंतरण किये जाने के जरिए होनी चाहिए । इस प्रकार, एलटीओ निधि में अंशदान बंद करते हुए आरबीआई द्वारा लाभांश के रूप में लाभों का निवल अंतरण 1992 में लगभग 200 करोड़ रुपये (2 बिलियन रुपये) से बढ़कर 2007 में 11,400 करोड़ रुपये (114 बिलियन रुपये) हो गया है।

वित्तीय क्षेत्र सुधार के अनेक आयाम हैं और उत्पादन एवं रोजगार के मुद्दे से विशेष रूप से प्रासंगिक है ऋण की लागत और इसकी उपलब्धता । ब्याज दरों को महत्वपूर्ण अंश तक अविनियमित किया गया, न केवल अधिक कारगर अप्रत्यक्ष लिखतों के उपयोग के प्रति मौद्रिक नीति के संचलन में सहायता करने के लिए, बल्कि इसलिए भी कि नियंत्रित ब्याज दर प्रणाली अक्षम और खर्चीली साबित होती थी, बिना आवश्यक रूप से जरूरतमंद लोगों को ऋण की उपलब्धता सुनिश्चित किये हुए । तथापि, आरबीआई का संस्तुत दृष्टिकोण सरकार द्वारा सहायता किये जाने को प्रतिवारित नहीं करता है, लेकिन यह प्रतिसहायता प्रदान करने के लिए बैंकिंग प्रणाली के अत्यधिक उपयोग का समर्थन नहीं करता है, खासकर यदि ऐसा उपयोग निर्धनेतर लोगों की सहायता के लिए किया जाये । आरबीआई एक ऐसी वित्तीय प्रणाली का पक्षधर है, जो उचित शर्तों पर ऋण की उपलब्धता को प्रोत्साहन देती है और उन प्रयोजनों के लिए ऋण प्रदान करती है, जिनसे ब्याज और मूलधन की चुकौती सुनिश्चित होती है, अर्थात् बैंक द्वारा स्वीकार्य योजनाएं ।

उक्त दृष्टिकोण के संबंध में आरबीआई और सरकार के बीच व्यापक करार हुआ है और तदनुसार, बैंकिंग प्रणाली के माध्यम से लघु कृषकों और लघु निर्यातकर्ताओं को ब्याज दरों के संबंध में आर्थिक सहायता इस समय सीमित अवधि के लिए प्रदान की जा रही है । ऐसे अनेक सरकार प्रायोजित कार्यक्रम हैं, जो सुरक्षित वर्गों के लिए चलाये जाते हैं और ये लघु आकार वाले ऋण होते हैं, जिनके लिए सरकार आर्थिक सहायता देती है, खासकर रोजगार देने के प्रयोजन से । इस प्रकार, वित्तीय क्षेत्र, खासकर बैंकिंग प्रणाली का उपयोग सरकार की राजकोषीय नीति के संचालन के रूप में किया जाता है, ताकि चुनिंदा कार्यकलापों के लिए या असुरक्षित वर्गों के लिए सहायता प्रदान की जाये और आरबीआई ऐसे उपायों को समर्थकारी बनाने के लिए मददगार की भूमिका निभाता है, जबकि वह अनुकूल ऋण-संस्कृति के दीर्घकालीन लक्ष्यों को पूरा किये जाने पर जोर देता है । समग्र उद्देश्य तो वृद्धि और स्थायित्व है, लेकिन समावेशन और साम्यिक वृद्धि सुनिश्चित करने के लिए चुनिंदा राजकोषीय समर्थन के तत्वों के साथ । इस समय उपर्युक्त उपायों के चलते सहायता का वार्षिक राजकोषीय बोझ, वितीय क्षेत्र के माध्यम से, जीडीपी के चौथाई प्रतिशत के बराबर अनुमानित है ।

ऋण की उपलब्धता और आबंटन

सुधार-पूर्व अवधि की विशेषता होती थी अत्युच्च पूर्व-क्रय अधिकार, जो बैंक जमाराशियों के पचास प्रतिशत से भी अधिक होते थे और बैंकों के लिए आरक्षित नकदी निधि अनुपात तथा सांविधिक चलनिधि अनुपातों के माध्यम से किये जाते थे । सुधार प्रक्रिया के भाग के रूप में इन दरों में क्रमिक रूप से कमी लायी गयी है और इस समय वे तीस प्रतिशत के निकट हैं - जो अंशतः चलनिधि प्रबंधन की वर्तमान नीति को प्रतिबिंबित करते हैं । तदनुसार, बैंकिंग प्रणाली से गैर सरकारी प्रयोजनों के लिए उपलब्ध संसाधनों का अनुपात सुधार प्रक्रिया आरंभ किये जाने के समय से अब तक काफी बढ़ गया है । पुनः, केंद्र और राज्यों के राजस्व-लेखा में योजनाबद्ध सुधार होने और मुद्रा बाजारों में अधिक सामान्य चलनिधि स्थिति होने से बैंक निधियों के अनुपात में और भी अधिक वृद्धि होनी चाहिए, जिन्हें निजी क्षेत्र में वित्तपोषण और रोजगार बढ़ाने के लिए उपलब्ध कराया जा सकता है ।

चयनात्मक ऋण नियंत्रण, जो चुनिंदा क्षेत्रों को ऋण की उपलब्धता को प्रोत्साहन देने या हतोत्साहित करने के साधन के रूप में प्रयोग किया जाता था, सुधार-पूर्व अवधि में व्यापक होता था । अब इन्हें विघटित कर दिया गया है । तथापि, हाल ही में पूँजी बाजार, स्थावर संपदा, आवास और उपभोक्ता ऋणों के प्रति बैंक की ऋण जोखिमों के लिए जोखिम भार और प्रावधानन अपेक्षाओं को बढ़ाना आवश्यक हो गया, ताकि तेजी से बढ़ते आस्ति-मूल्यों से उत्पन्न होने वाले संभावित जोखिमों के प्रति बैंकों की संवेदनशीलता को बढ़ाया जा सके । ये उपाय, जो अस्थायी हैं, इन संवेदनशील क्षेत्रों को ऋण आबंटन किये जाने के संबंध में वांछनीय प्रभाव डालते प्रतीत होते हैं ।

ऋण आबंटन को प्रभावित करने के लिए बैंकिंग प्रणाली में सर्वाधिक महत्वपूर्ण लिखत, वृद्धि और रोजगार संबंधी बाध्यताओं को ध्यान में रखते हुए, प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र को बैंक द्वारा दिये जाने वाले उधार से संबंधित शर्त रही है। शर्त यह है कि घरेलू बैंकों के मामले में अग्रिमों का चालीस प्रतिशत (और विदेशी बैंकों के मामले में बत्तीस प्रतिशत, जिसमें निर्यात अग्रिम शामिल है) विनिर्दिष्ट प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्रों, यथा, कृषि, लघु उद्योग, आदि, को उधार दिया जाये । वित्तीय क्षेत्र सुधारों के परिणामस्वरूप उधार देने योग्य संसाधनों में विस्तार हुआ है। तथापि, सुधार प्रक्रिया के दौरान 'प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र' के रूप में माने जाने के लिए पात्र क्षेत्रों की सूची को बढ़ाया गया और उसमें विनिर्दिष्ट बांडों और कार्यकलापों, यथा, जोखिम पूँजी, को भी शामिल किया गया। इस प्रक्रिया में अनेक मामले में शर्त को हलका कर दिया गया और अभिकलन को विकृत किया गया । परिणामस्वरूप, परंपरागत रूप से तरजीह दिये गये प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र के उपक्षेत्रों, यथा, कृषि और लघु उद्योगों को अपर्याप्त ऋण उपलब्धता का बोध बढ़ता गया । इस चिंता पर ध्यान देने के लिए व्यापक अभ्यास और समीक्षा की गयी और प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र के लिए नये दिशानिर्देश अप्रैल 2007 में जारी किये गये । फलस्वरूप, प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र अब उच्च रोजगार वाले क्षेत्रों, यथा कृषि, लघु उद्योग, शिक्षा ऋण और न्यून लागत वाले आवास को अग्रिम देने तक सीमित कर दिया गया है। प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्रों को उधार देने में रह गई कमी की राशि को अब, जैसेकि पहले हुआ करता था, उन पुनर्वित्त संस्थाओं में जमा करना होगा, जो कृषि और लघु उद्योगों को पुनर्वित्त प्रदान करती हैं । इस प्रकार ऋण-उपलब्धता पर क्षेत्र के हिसाब से ध्यान, रोजगार पर जोर देते हुए, प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र से संबंधित शर्तों के माध्यम से दिया जाता है और इसके लिए बैंकिंग कार्यकलापों के वाणिज्यिक विचार को अनावश्यक रूप से दुर्बल नहीं बनाया जाता है ।

प्राथमिकताप्राप्त क्षेत्र के अंतर्गत उप-लक्ष्यों का प्रयोग अन्य दिशानिर्देशों के साथ, जिसमें सरकार प्रायोजित कार्यक्रमों से संबंधित दिशानिर्देश शामिल हैं, आबादी के

पहचाने गये असुरक्षित वर्गों, यथा, अनुसूचित जातियों, धार्मिक अल्पसंख्यकों और अनुसूचित जनजातियों को ऋण की उपलब्धता बढ़ाने के लिए किया जाता है ।

भारतीय अर्थव्यवस्था में त्वरित वृद्धि ने अनेक राज्यों को लाभ पहुँचाया है, लेकिन ऐसे कुछ राज्य हैं, जहाँ बैंकिंग प्रणाली का ऋण-जमा अनुपात कम दिखाई देता है । यह आवश्यक हो गया है कि ऐसे पिछड़ने वाले राज्यों को बैंकिंग सुविधाएँ विस्तारित करने के लिए प्रत्येक राज्य की अनोखी समस्या की पहचान की जाये और त्वरित वित्तीय सुदृढ़ता के लिए क्षेत्र-विशिष्ट कार्य-योजना बनायी जाये । ये योजनाएँ राज्य सरकारों, बैंकों और अन्य विकास एजेंसियों की पूरी सहभागिता के साथ बनायी जाती हैं । ऐसी योजनाएँ पहले से ही उत्तरांचल, उत्तर पूर्वी राज्यों, हिमाचल, झारखंड, अंदमान व निकोबार तथा बिहार के लिए बनायी जा चुकी हैं । विस्तृत होते कारोबार के अवसरों को देखते हुए और राज्य सरकारों से महत्वपूर्ण समर्थन की दृष्टि से बैंकों के बीच उत्साह बना है, जिन्हें इसमें सहक्रिया दिखाई पड़ती है । राज्यों और बैंकिंग प्रणाली के बीच बढ़ते सहयोग के इन उपक्रमणों में आरबीआई एक उत्प्रेरक और समन्वयक की भूमिका निभाता है । वास्तव में आरबीआई ने राज्यों के ऋण-प्रबंधन, समेकित ऋण-शोधन निधि के प्रबंधन, बजट की पारदर्शिता सरकारी लेखों का कंप्यूटरीकरण और राजकोषीय जवाबदेही के संबंध में विधान का अधिनियमन करने की दिशा में सक्रिय भूमिका निभायी है । आरबीआई और राज्यों के बीच संबंध परस्पर विश्वास पर और आरबीआई की विश्वसनीयता की मान्यता पर आधारित है ।

कुछ मामलों में इन राज्य-विशिष्ट कार्य-योजनाओं का एक महत्वपूर्ण अवयव रहा है गैर सरकारी संगठनों और अन्य व्यष्टि वित्तीय एजेंसियों की विस्तारित भूमिका के लिए क्षेत्र-विस्तार । नाबार्ड के समग्र मार्गदर्शन में बैंक व्यष्टि वित्त का संवर्धन करने में सक्रिय भूमिका निभाते हैं, खासकर हाल में अनुमोदित नवोन्मेषकारी दृष्टिकोणों, यथा, कारोबार, पत्राचार मॉडलों को ध्यान में रखकर ।

हमारी चिंता का एक क्षेत्र यह रहा है कि बैंक शाखाओं का संकेंद्रण मेट्रोपालिटन क्षेत्रों में रहा है, जो अर्ध शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों के प्रतिकूल है । इस समस्या को दूर करने के लिए वर्ष 2006 से किसी बैंक को नयी शाखा खोलने की अनुमति आरबीआई द्वारा इस शर्त पर दी जाती है कि ऐसी नई शाखाओं की कम से कम आधी शाखाएँ आरबीआई द्वारा यथाअधिसूचित बैंकरहित क्षेत्रों में खोली जायें । अब अनेक बैंकों ने यह देखा है कि अर्धशहरी और ग्रामीण क्षेत्रों की शाखाएँ भी वाणिज्यिक रूप से अर्थक्षम हैं।

यह नोट करना आवश्यक है कि बैंकिंग क्षेत्र में आरबीआई के नीति संबंधी अधिमानों ने , जिनका लक्ष्य ऋण के लक्ष्यित आबंटन और बैंकिंग सेवाओं के व्यापन संबंधी मुद्दों पर ध्यान देना रहा है, लेखांकन व्यवहारों में सुधारों पर, अनर्जक आस्तियों की कमी पर और लाभप्रदता में सुधार तथा पूँजी पर्याप्तता पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं डाला है । यह नोट करना लाभदायक होगा कि बैंक स्टॉकों, सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्रों, दोनों के मूल्यन में सुधार हो रहा है, जबकि विदेशी बैंक अपने भारतीय परिचालनों से वैश्विक लाभ का अपना अनुपात बढ़ा रहे हैं।

ऋण के परे : वित्तीय समावेशन

सुधार प्रक्रिया में, जो वर्ष 1992 में आरंभ हुई, वित्तीय क्षेत्र का सुधार प्रारंभिक चक्र में हुआ । सुधार के पहले चरण में वित्तीय दमन के विलोपन पर ध्यान दिया गया, जिसके बाद वित्तीय क्षेत्र का वृहत्तर बाजारीकरण और विनियमन प्रणाली में परिवर्तन लाया गया, जो वैश्विक मानकों से संगति रखता था । इस प्रक्रिया ने वित्तीय क्षेत्र को सुदृढ़ बनाया, इसकी कार्यकुशलता में सुधार किया, स्थायित्व प्रदान किया और प्रभावशाली वृद्धि को सुसाध्य

बनाया, अनेक वैश्विक एवं घरेलू आघातों को बरदाश्त किया । दूसरा चरण स्पष्टतः वित्तीय क्षेत्र के जनतंत्रीकरण को सुनिश्चित करना था । दो वर्ष पहले आरंभ की गयी इस प्रक्रिया का लक्ष्य था एक सौ प्रतिशत वित्तीय समावेशन सुनिश्चित करना । वित्तीय समावेशन की प्रक्रिया में शामिल होते हैं प्रत्येक घर को खोजना और और उनका बैंकिंग प्रणाली में समावेशन करना । इस दृष्टिकोण के मुख्य लक्षणों में लोगों को बैंकिंग प्रणाली से 'जोड़ना' न कि केवल ऋणों का वितरण करना; और बहुविध सरणियों, यथा, नागरिक सेवा संगठनों, एनजीओ, डाकघर, किसान क्लब, पंचायत, एमएफआई (एनबीएफसी से भिन्न), आदि को कारोबार सुसाध्यकों/प्रतिनिधियों के रूप में उपयोग करना होता है, ताकि बैंकों की पहुँच बढ़ सके । इसके अतिरिक्त, एक विकेंद्रीकृत दृष्टिकोण अपनाया जाता है, जो राज्य/क्षेत्र विशिष्ट होता है और उसका संबंधित राज्य सरकारों तथा बैंकों के बीच निकट का अंतर्वलन और सहयोग होता है ।

सूचना प्रौद्योगिकी लेन-देन की लागत को कम करने के लिए महत्वपूर्ण होती है। सरकार के अविरत चलने वाले विशाल ग्रामीण रोजगार और पेंशन भुगतान, आदि, कार्यक्रमों को सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से वित्तीय समावेशन का आश्रय लेते हुए न्यूनतम लेन-देन लागत से कार्यान्वित किया जा सकता है। अनेक जिलों को संपूर्ण वित्तीय समावेशन के अंतर्गत पहले ही शामिल किया जा चुका है और मूल्यांकन और प्रतिसूचना की एक प्रक्रिया आगे बढ़ रही है। आरबीआई इस प्रक्रिया को प्रोत्साहन और सहायता प्रदान कर रहा है ।

उभरते बाजार वाली अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) के लिए वित्तीय समावेशन का महत्व गवर्नर टीटो एम्बोवेनी ने 2 नवंबर 2007 को 13वें सी.डी.देशमुख स्मारक व्याख्यान में अर्थपूर्ण ढंग से निम्नलिखित रूप में व्यक्त किया था :

"इसके बाद जो एक और चिंता है वह यह है कि धन के असमान वितरण के कारण सधन और निर्धन के बीच तनाव की स्थिति उत्पन्न होती है । इन परिस्थितियों में वित्तीय सेवाओं तक पहुँच मार्ग को प्रशस्त करना एक महत्वपूर्ण नीतिगत उद्देश्य हो जाता है । यह एक मानी हुई बात है कि समाज के निचले सोपानक पर स्थित लोगों का वित्तीय समावेशन व्यष्टि वित्त के माध्यम से वित्तीय क्षेत्र में करना गरीबी उन्मूलन की दिशा में सशक्त कारक होता है । जैसे-जैसे उपभोक्ता वित्त की मांग बढ़ेगी, वित्तीय लिखतों की आवश्यकता भी बढ़ेगी और वितीय क्षेत्र को इसके अनुकूल बनना होगा ।"

रोजगार में नये प्रवेश करने वालों की एक बड़ी संख्या के लिए वित्तीय सुरक्षा बढ़ाने और वित्तीय शिक्षा प्रदान करने के लिए और उच्च आय वर्ग वाले लोगों को तेज गति से बाजारीकृत हो रहे वित्तीय क्षेत्र में अपने वित्त का बेहतर प्रबंध करने के लिए एक शुरुआत की गयी है । अलग-अलग ग्राहकों और समूची वित्तीय प्रणाली के हित में सुविज्ञ विकल्पों को तरजीह दी जाती है । फुटकर ऋणों में वृद्धि, खासकर उपभोक्ता टिकाऊ वस्तुओं के ऋणों में, और बहुतों के लिए अनुवर्ती ऋण चुकौती समस्याओं को ध्यान में रखते हुए कुछ बैंकों द्वारा लाभरहित कार्यकलाप के रूप में ऋण-परामर्श केंद्रों की स्थापना करके शुरुआत की गयी है ।

संस्थागत सुधार

वर्ष 1992 में सुधारों को आरंभ किये जाने के बाद से कोई बैंकिंग संकट या मुद्रा संकट उपस्थित नहीं हुआ है । तथापि, यह देखा गया है कि कुछ अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के पास अपर्याप्त पूँजी थी; अनेक शहरी सहकारी बैंक दिवालिया बन चुके थे और ग्रामीण सहकारी ऋण प्रणाली में काफी ह्रास हुआ था । हाल के वर्षों में इस संबंध में सुधारात्मक उपाय किये गये हैं । अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के संस्थागत सुधार ने नियंत्रण मानकों को प्रबलित किया और यह देखा कि वे सभी बैंक विलुप्त हो गये, जो पूँजी पर्याप्तता मानदंडों को पूरा नहीं करते

थे । लेकिन आबादी के एक विशाल वर्ग, खासकर असंगठित क्षेत्र, व्यापारियों, ग्रामीण क्षेत्र की ऋण आवश्यकताएँ समुदाय आधारित बैंकों को पुनरुज्जीवित करके, उनकी पुनर्संरचना करके और नवीकरण करके सर्वोत्तम ढंग से पूरी की जाती हैं । ग्रामीण क्षेत्रों, खासकर पिछड़े क्षेत्रों की बेहतर ढंग से सेवा एक संस्थागत तंत्र, यथा, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक (आरआरबी) की पुनर्संरचना करके की जा सकती है । ग्रामीण सहकारी संस्थाओं को पुनरुज्जीवित करने का एक विशेष कार्यक्रम आरबीआई, राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड), भारत सरकार और राज्य सरकारों के अंतर्वलन के साथ आरंभ किया गया है, जिसे जीडीपी के लगभग 0.50 प्रतिशत तक संभव राजकोषीय समर्थन प्राप्त है । इन सुधारों को अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की सेवाओं में अंतराल को न केवल बैंकिंग, बल्कि विदेशी मुद्रा सहित चालू खाता, बीमा उत्पादों, आदि, से संबंधित सेवाओं को पूरा करने के लिए अनिवार्य समझा जाता है ।

आरबीआई और राज्य सरकारों के बीच द्वैध नियंत्रण के मुद्दों पर विजय प्राप्त करने तथा बेहतर समन्वय सुनिश्चित करने के लिए सहमति ज्ञापन के माध्यम से आरंभ किये गये नवोन्मेषकारी तंत्र को, जिसे शहरी सहकारी बैंकों को नवीकृत करने के लिए अपनाये जाने पर सफल पाया गया था, ग्रामीण सहकारिता प्रणाली को पुनरुज्जीवित करने के अविरत कार्यक्रम में भी अपनाया गया ।

अविनियम और प्रतिस्पर्द्धा के परे

जैसे-जैसे सुधार प्रक्रिया में प्रगति होती गयी, यह माना गया कि अविनियमन और प्रतिस्पर्द्धा से कार्यकुशलता बढ़ेगी और ग्राहकों को पहले से अच्छी गुणवत्ता वाली सेवा उचित किन्तु प्रतिस्पर्द्धात्मक लागत पर मिलेगी । तथापि, जबकि अनेक प्रकार के सुधार आशा के अनुकूल किये जा चुके हैं, फुटकर ग्राहकों के संबंध में अनेक प्रतिकूल लक्षण कुछ बैंकों में विशेष रूप से देखे गये हैं । युक्तियुक्त कीमत-निर्धारण के मुद्दों के अलावा, असमान संविदा, अनुचित व्यापार व्यवहार, गैर पारदर्शी फीस, प्राइवेसी में दखल, अत्यधिक दंड, चेक समाशोधन में विलंब, ब्याज दरों या समान मासिक किस्तों का मनमाना संशोधन, कुछ मामलों में अत्यधिक ब्याज लगाया जाना और ऋण वसूली एजेंटों द्वारा ज्यादतियाँ करना, जैसी घटनाएँ देखी गयी हैं, जिनके चलते अनेक संस्थागत, नीति और क्रियाविधि संबंधी हस्तक्षेप आरबीआई द्वारा अपेक्षित होता है । प्रतिस्पर्द्धा से संबंधिति विचारों के बीच एक नाजुक संतुलन आवश्यक है, लेकिन बैंकों को एक सीमा तक विशेषाधिकार प्राप्त है, और जिस विनियामक ने उन्हें ऐसा विशेषाधिकार मंजूर किया है, उसका दायित्व यह सुनिश्चित करना है कि वित्तीय सुदृढ़ता और विस्तारीकरण एक दक्ष, उचित और साम्यिक ढंग से किया जाये । आरबीआई इन विचारों के नाजुक संतुलन को वित्तीय क्षेत्र की वृद्धि और वृद्धि एवं रोजगार के लिए वित्तीय क्षेत्र के सार्थक योगदान, दोनों के लिए, महत्वपूर्ण मानता है ।

नवीनतम उपक्रमण

आरबीआई के वार्षिक नीति वक्तव्य की मध्यावधि समीक्षा, 30 अक्तूबर 2007, में कुछ नये उपक्रमणों को निर्दिष्ट किया गया है, जो नोट किये जाने योग्य है । पहला, एक आंतरिक कार्यदल का गठन किया गया है, जो कृषि ऋणग्रस्तता से संबंधित समिति (अध्यक्षः डॉ. आर राधाकृष्ण) द्वारा की गयी सिफारिशों पर विचार करेगा । दूसरा, साहूकारों से संबंधित विधिक एवं प्रवर्तन ढाँचे में सुधार से संबंधित तकनीकी दल (अध्यक्षःएस.सी.गुप्ता) की सिफारिशों को राज्य सरकारों के पास युक्तियुक्त विचार के लिए भेजा गया । तीसरा, असंगठित क्षेत्र में उद्यमों के लिए राष्ट्रीय आयोग (अध्यक्षःडॉ.अर्जुन के.सेनगुप्त) ने एक व्यापक रिपोर्ट केंद्र सरकार के पास प्रस्तुत की । एक कार्यदल का गठन किया जा रहा है, जो उन सिफारिशों का अध्ययन करेगा, जिनका संबंध भारतीय वित्तीय प्रणाली

से है। चौथा, यह प्रस्ताव है कि अग्रणी बैंक योजना की कार्यपद्धति की और आरबीआई, बैंकों, नाबार्ड, राज्य सरकार के बीच राज्य और जिला स्तरों पर समन्वय की संबंधित व्यवस्थाओं की समीक्षा की जाये । विकासोन्मुख बैंकिंग के लिए इन संस्थागत व्यवस्थाओं की समीक्षा से एक नये ढाँचे की डिजाइन बनाने में मदद मिलेगी, जो न केवल नयी अभिमुखता, यथा, वित्तीय समावेशन, वित्तीय साक्षरता और ऋण संबंधी परामर्श को प्रतिबिंबित करेगा, बल्कि तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्था की बढ़ती माँगों को भी प्रतिबिंबित करेगा, जिसकी अगुआई घरेलू निवेश, घरेलू उपभोग और निर्यात माँग करेंगे ।

समापन टिप्पणी

निष्कर्षतः हमारा अनुभव यह दर्शाता है कि वित्तीय क्षेत्र की नीतियों और लिखतों का निरंतर पुनर्संतुलन किया जाता रहना चाहिए, ताकि यह न केवल वित्तीय बाजारों, कीमतों एवं समग्र स्थायित्व संबंधी विचारों के प्रति प्रतिक्रिया कर सके, बल्कि संपदा क्षेत्र की गतिविधियों, खासकर, सभी क्षेत्रों, अंचलों और आबादी के सभी वर्गों में वृद्धि की प्रवृत्ति के प्रति प्रतिक्रिया कर सके । वित्तीय क्षेत्र के विकास के प्रति ऐसा व्यापक लेकिन गत्यात्मक दृष्टिकोण वित्तीय नीतियों की वृद्धि और रोजगार के प्रति योगदान में बढ़ोतरी करते हुए स्थिरता को भी बनाये रखता है ।